समकालीन साहित्य

विविध विमर्श

संपादक

डॉ. विद्यावती राजपूत

डॉ. हसनखान के कुलकर्णी

प्रा. धन्यकुमार जिनपाल बिराजदार

प्रकाशक :

अधिकरण प्रकाशन

मकान संख्या-133, गली नम्बर-14, प्रथम तल,
बी-ब्लॉक, खजूरी खास, दिल्ली-110094
मोबाईल : 9716927587
ईमेल : adhikaranprakashan@gmail.com

प्रथम संस्करण	:	2021
आवरण चित्र	:	दिलीप कुमार शर्मा 'अज्ञात'
टाईप सेटिंग	:	मनीष कुमार सिन्हा
प्रिंटिंग	:	जी. एस. ऑफसेट, दिल्ली

© संपादक

ISBN : 978-93-89194-72-2
मूल्य : 205 रुपये

समकालीन साहित्य : विविध विमर्श(आलोचना)-डॉ. विद्यावती राजपूत, डॉ. हसनखान के कुलकर्णी, प्रा. धन्यकुमार जिनपाल बिराजदार

Samakalina Sahitya Vividha Vimarsa(Crticisim) Edited by Dr. Vidyavati G Rajput, Dr.Hasankhan K Kulkarni, Dhanya Kumar Jinpal Birajdar

हिंदी दलित लेखिका और नारी विमर्श

- श्रीमती संध्या दत्ता कदम

जग जब से जागा है, स्त्री पुरुष एक दूसरे के जीवन के सहायक बनते ही आये हैं। चाहे वह संगी-साथी बन कर या अर्धांगी बनकर अथवा अन्य को सबंधी या रिश्तेदार बनाकर यह तो सभी को अंदाजा है कि स्त्री बगैर पुरुष अधूरा है। पुरुष बगैर स्त्री अवश्य जी सकती है क्योंकि इसके पास निसर्ग ने सहनशक्ति दी है। कोई भी क्षेत्र लीजिये नारी जितनी सफल रहती है शायद ही उतना पुरुष नही। ऐसा कहकर मैं पुरुषों का अपमान नही कर रही हूँ बल्कि वास्तविकता का परिचय करवा रही हूँ। अगर बचपन में देखेंगे तो, लड़की नऊ महीने में ही चलना सीखती है और लड़का बारह अथवा पंद्रह महीने में। यह जन्मजात इतनी सशक्त होते हुए भी इसे समाज अशक्त क्यों बनाया? यह तो चिंतन का विषय है। समाज और संस्कृति साथ ही परिवार का भला बुरा सोचनी वाली नारी ही तो है। नारी नही हैं तो जीवन अधूरा है और जिस घर में नारी नहीं होगी वह घर घर न रहकर सुनसान महल बन जाता है, जैसे कि डरावना खंडर, आत्माओं का वास करने योग्य भयानक भवन।

जिस घर-आंगन में बिटिया के पाजेब न झनके वह आंगन ही क्या जैसे वीरान समझो। मेरा कहने का तात्पर्य यह है कि नारी से ही दुनिया है। दुनिया में नारी की आधी आबादी है। इतना होने पर भी नारी को अभी भी अपनी मर्जी से जीने का अधिकार नहीं मिला है। यह तो आम नारी की बात कही है। हम अगर दलित नारी को लेकर सोचेंगे तो कुछ और ही इतिहास गवाह है। उसे तो, मैं स्वतंत्र रहित नारी ही कहना उचित समझूंगी। अर्थात उसे पति, पिता, समाज, आदि को दृष्टि में रखकर सोच रही हूँ। एक ओर देखा जाये तो समानता की बात लेंगे तो दलित परिवार में स्त्री-पुरुष दोनो मेहनत करते हैं। विचार विनिमय में भी एक दूसरे के राय से ही विषयों को सुलझाने का प्रयत्न करते है। यह सारी बाते हमे उच्च जाति के परिवार में कम ही देखने को मिलती है क्योंकि सम्पन्न परिवारों

की नारी घर के बाहर ही नहीं आती और समाज के उतार चढाव से अपरिचित रह जाती है। ऐसा भी कहते हैं कि सम्पन्न और राज शाही परिवारों में नारी को 'पैर की जूती' समझते हैं। किसी कार्य में उसे दखल देने की स्वतंत्रता नहीं होती। परंतु दलित परिवार में पति-पत्नी दोनो मिलकर राय देने का लेने का बहूतेरे परिवारों में रिवाज है।

सदियों से नारी को क्यों दबाने का कार्य होते है यही समाझना जरूरी है। अनेक समाज सुधारक कही आंदोलनों के आधार से भारतीय नारी को उसे स्वछंदता से जीने के हक दिलाने के प्रयत्न करते रहे लेकिन कोई भी आज तक सफल नहीं हुए। एक मात्र व्यक्ति डॉ. भीमराव अंबेडकर के संविधान के बदौलत नारी आज सुकुन की साँस लेने का प्रयत्न कर रही है। वह अनेक प्रयत्नों के माध्यम से निडरता से कुछ कर दिखाना चाहने पर भी यह पुरुष प्रधान समाज उसे सदा गुलामी के गर्त में ही ढकेलते आया है। वह अगर कानून की बाते करने लगेगी तो उसे बलात्कार का डर दिखाया जाता है और उसे मानसिक गुलाम बनाकर जितना हो सके उतना घर गृहस्थी में ही धकेलने का प्रयत्न करते आये हैं अगर इस बात को नहीं मानती तो तलाक देने का डर बताकर उसका जीवन बर्बाद किया जाता है। ऐसे वातावरण में उसकी सोच डरी सहमी सी रह जाती है और वह खुलकर कोई काम करने में हिचकिचाने लगती है। ऐसी ही डॉ. सुशीला टाकभौरे लिखित कहानी 'कड़वा सच' में देखने को मिलता है। आगे चलकर हम इस कहानी को विमर्शात्मक दृष्टि से देखेंगे और इसके नारी पात्र की मानसिकता को निर-क्षीर भाव से न्याय दिलाने का प्रयन्त करेंगे।

डॉ. सुशीला टाकभौरे जी लिखित कहानी 'कडवा सच' को मैंने उनका कहानी संग्रह 'जरा समझो' वाणी प्रकाशन दिल्ली से 2015 में प्रकाशित हुआ है। इस कहानी में मुख्यता तीन पात्र आते हैं। निशा, जो वोमेन्स आर्गेनाईजेशन में काम करती है इसी संस्था की ओर से विचारगोष्ठियों का आयोजन किया गया है। उसी कार्यक्रम में निशा तथा शशि वाल्मीकि का परिचय हुआ था। कविता सत्र में शशि ने भाग लिया था। दोनों के बीच बातचीत होती रही और निशा ने शशि से कहा 'अच्छी कविताएं लिखती हैं। कहानी भी लिखती है क्या? दलित साहित्यकारों से विचार विमर्श करोगी, तो और अच्छा लिखोगी।' (जरा समजो-पृष्ट संख्या-44)

योगाना योग-शशि की मुलाकात साहित्यकार सुधीर से होती है दोनों का परिचय होने पर वे कहते हैं कभी समय मिले तो आपके घर आऊंगा और आपकी कहानियों पर चर्चा करूंगा। एक दिन सुधीर, शशि के घर आये और उसने लिखा हुए कहानियों को देख कर कहते हैं-'आपने ये कहानियां लिखी हैं?-ये सब एक है

कि चार हैं? मुझे तो सब में एक ही कहानी नजर आ रही है, सब में एक ही बात, एक ही पात्र, एक जैसी समस्याएं, एक जैसी परेशानियाँ। आप ही देखिये-वही आर्थिक तंगी, बच्चे, पति, नौकरी और बस...।' शायद सुधीर ने सच ही कहा है। एक दलित नारी पढ़ लिखकर नौकरी योग्य बनने के पश्चात, अपने ही परिवारों की समस्याओं को सुलझाते अपनी आयु बिता देती है। इसलिये वह भुक्त-भोगी बनकर जितना जानती है उतना ही लेखन में उतार सकती है। इसलिए उसकी कृतियों मैं नयापन नहीं दिखता।

अगर जीवन में नयापन लाने के लिये किसी क्षेत्र मे उतरना चाहती है तो समाज में बेकार में घूमने वालों के दोष देने वालो की कोई कमी नही है। वे इस नारी को अपने हवस का शिकार बनाने के लिये ढूंढते रहते हैं। चाहे वह शारीरिक रूप से हो या मानसिक रूप से हो ऐसी अनेक घटनाएं शशी के साथ हुए हैं। वह उनकी याद करके ही घबरा उठती है। उन्हें अपनी कहानियों में कैसे उतारेगी? फिर भी सुधीर जी जाते समय इसे हिदायत देते हुए कहते है-'पहले की कहानियों को रहने दो लेकिन इस अधूरी कहानी का ढांचा पूरी तरह बदल दो। औरत की वही पुरानी कहानी, महंगाई की परेशानी, बच्चों का रोना, पति का उलाहना, नौकरी की भागदौड़, ये सब बातें छोड़ो। दुनिया में बहुत कुछ है देखने के लिए दिखाने के लिए। अपने दुख के साथ दलित समाज का दुख भी देखो दलितों के अपमान, तिरस्कार को समझों, उनके संघर्ष, पीड़ा की सच्ची कथाएं लिखो। स्त्रियों पर होने वाली अत्याचारों की घटनाओं पर कहानी लिखो। कमजोर दलित स्त्री को सबल रूप में दिखाओ।'(पृष्ट संख्या-46) नारी में ऐसी हिम्मत भरने वाले पुरुषों की समाज को अति आवश्यकता है। नहीं तो नारी को पीछे धकेलने वाले की संख्या ही भारी है। मगर सुधीर जैसे ईमानदार पुरुष भी जीवित है तभी तो आज भारतीय नारी अपने क्षेत्रों को खुद चुनने के योग्य बन रही है। नारी में धैर्य भरना अति आवश्यक है। जब उसमें धैर्य जागता है तो वह कैसे भी कठिन-से कठिन कार्य करने के लिए भी सिद्ध होती है। इसलिए सुधीर जी शशि के प्रतिभा को जान कर आगे बढ़ने के लिए और अच्छी कहानियों को उतारने के अनुदेश देते हुए कहा-'यह जो आपकी नारी है उसे अंतरमुखी मत बनाओ। यह जो पाना चाहती है, उसे पाने दो। उस पर अपने विचार मत लादो उस पर सामाजिक नैतिकता के परंपरावादी आदर्श मत लादो उसे मानसिक रूप से मुक्त रखो-ऐसा उसे दर्शाओ। क्योंकि बीमार मानसिकता रखने से अच्छा है वह अपने जीवन में जो चाहे-पाले, या जैसा चाहे कर ले। घुट-घुट कर मारने के लिए किसी नारी को मजबूर करना, यह कौन-सी सामाजिकता है? मुक्त होना चाहती है। अपनी हिम्मत से, लीक से

हटकर कुछ करना चाहती है, तठस्थ होकर अपने निर्णय खुद लेना चाहती है। त्याग-तपस्या में अपना जीवन गलाना क्या आज तर्कपूर्ण कहा जा सकता है? कुंठित, बीमार, मानसिकता रखने वाली नारी, संपूर्ण नारी समाज के लिए एक आदर्श बानी रहे क्या आप इसे ठीक समझती है?' ऐसी बाते तो नारी जीवन में सुधार लाने के लिए 'सोने पे सुहागा' बन जाती है लेकिन समाज का क्या करे? हाँ समाज में कौन-सी नई बात आयेगी ना उसे आसानी से स्वीकार किया नहीं जाता। नयापन लाना ही है तो उसे जबरन जीवन में उतारना पड़ेगा तब कही पुरानी परंपरा में बदलाव आएगा।

विमर्शात्मक दृष्टि से अगर इस कहानी की पात्रों की परख करेंगे तो हमें यही विचार प्राप्त होता है कि नारी पर थोपे गए कुछ अनावश्यक बंधनों को हटाना चाहिए साथ ही स्वतंत्र विचारों से विचरने के लिए पुरुष प्रधान समाज आगे आना चाहिए। उसे पुरानी परंपरा में ही न दबाकर पढ़ाई-की खुलकर स्वतंत्रता देना जरूरी है। ये सारी समस्याएं ज्यादातर दलित नारी के जीवन पर असर करती है। इसलिए दलित बेटियां प्रतिभा संपन्न होते हुए भी पीछे रह जाती है। अगर इन्हें मौका मिलेगा तो सबसे आगे रहेगी का उदाहरण शशि का लेखन बताता है। साथ ही सामाजिक बंधनों को भूलकर परिवारजनों का सबल पाकर हर नारी अपना भविष्य बनाने में पूर्णतः सक्षम रहती है का योग्य उदाहरण स्वतः लेखिका सुशीला टाकभौरे जी ही तो है। अंततः मैं यही कहना चाहती हूं कि 'कड़वा सच' कहानी के नारी पात्रों में दीन मानसिकता को दूर करने के लिए संबल मार्गदर्शन करने वाले सुधीर जी ने बहुत ही सकारात्मक सोच के साथ नारी को प्रोत्साहित किया है। ऐसा वातावरण अगर हर एक समाज में फैलाने का प्रयत्न होगा तो हर समाज की नारी अपनी उन्नति अपने ही बल पर करेगी। डॉ. सुशीला टाकभौरे जी की जीवनी से पता चलता है कि दलित नारी आज इस आधुनिक युग में भी गुलाम बनकर ही रह रही है। एक तो आर्थिक गुलामी, दूसरा मानसिक गुलाम, परिवार में दबकर रहना आदि अनेक समस्याओं से सामना करने वाली नारी को हम देखते हैं। मेरे विचार से नारी कितनी भी पढ़ लिखकर वह आगे बढ़ती है। उसके पश्चात उसके जीवन में परिवर्तन आता है। फिर भी नारी मानसिक संबल बनना अति जरूरी है। यही विचार हम इस कृति में भी देखने को मिलती है। नारी को संबल बनाना है तो समाज में वैचारिक समानता लाना अति जरूरी है।

-श्रीमती संध्या दत्ता कदम
दिवेकर कॉलेज ऑफ कॉमर्स-पी.जी.(एम. कॉम) सेंटर कोडिबाग,
कारवार- 581301, संपर्क : 9535998608, 9448796762

डॉ. विद्यावती राजपूत

संस्थापक
बहुभाषा संगम संस्था, लिंगराजनगर(उत्तर)
43, पाटिल से आउट, हुबली, कर्नाटक

डॉ. हसनखान के कुलकर्णी

हिंदी सह प्राध्यापक
इंदिरा गांधी सरकारी प्रथम दर्जा
महिला कॉलेज सागर-577401,
जिला-शिमोगा(कर्नाटक)

प्रा. धन्यकुमार बिराजदार

हरिभाई देवकरण महाविद्यालय
सोलापुर, महाराष्ट्र

अप्र अधिकरण प्रकाशन
ISO 9001 : 2015 प्रमाणित प्रकाशन
नयी रचना नये विचार
अक्षर अक्षर आँखदार
ISBN : 978-93-89194-72-2